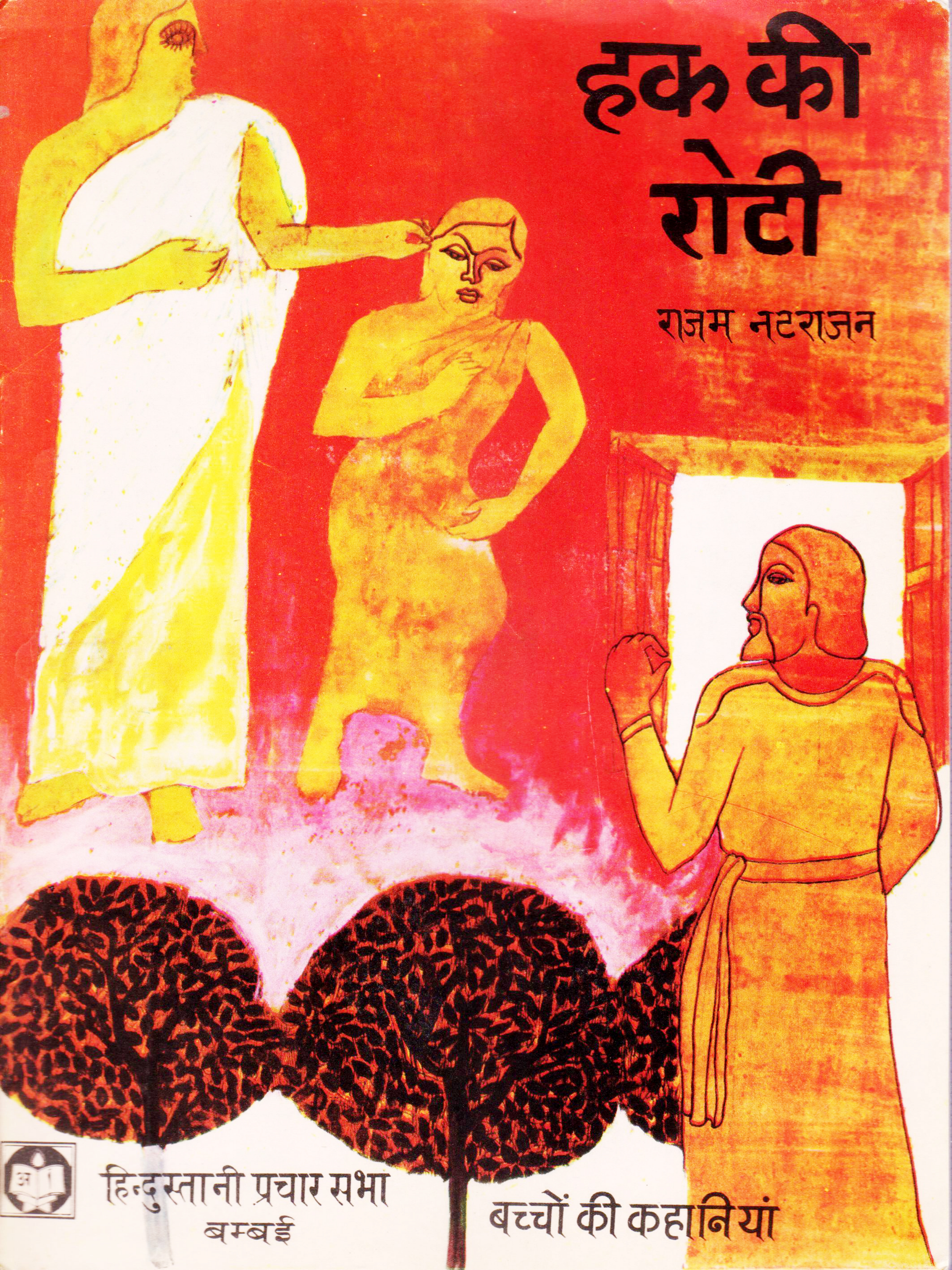
हक की रोटी

राजम नटराजन



हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

बच्चों की कहानियां

हमारी बात

हमारे देश की संस्कृति दुनिया में सबसे पुरानी और काफी समृद्ध है। मगर आपसी झगडों, जलन और बैर की वजह से हम कमज़ोर हो गये हैं और इसी वजह से डरी-सहमी हालत में जी रहे हैं। नये ज़माने की शिक्षा भी हमें सुधार नहीं पाई है। इसीलिए इस कमज़ोर और खतरनाक हालत से हम उबर नहीं पा रहे हैं। फिर भी यह हक़ीक़त है कि हमारी संस्कृति अत्यंत जीवंत है, कभी मिट नहीं सकती है।

दूसरे प्राणियों के मुक़ाबले आदमी में यह एक विशेषता है कि उसमें धर्म की सूझबूझ है। अच्छा-बुरा, धर्म-अधर्म परखने का उसे विवेक है। मैं तो इसे ही सच्चा धर्म मानता हूं। 'धर्म' वही है जिससे आदमी का सुखी, सार्थक जीवन बनता है। धार्मिक इन्सान समझता है कि दूसरों के सुख में उसका भी सुख है। दूसरों को तबाह करके कोई सुखी नहीं हो सकता। दूसरों के दुःख से जो सुख उठाता है, वह अधर्मी है।

सच्चाई और अहिंसा, धर्म पर चलने के दो रास्ते हैं। दुनिया के सभी धर्मों में इन दो बातों पर ज़ोर दिया गया है। हिन्दू, इस्लाम, बौद्ध, ईसाई, पारसी, जैन, सिख आदि सभी धर्मों के पैग़म्बरों ने धर्म के जिन आदर्शों की बात कही है, वह हर इन्सान के लिए समान रूप से लागू होती है। हमारे देश की परंपरा में सब धर्मों के लिए इज़्ज़त की भावना रही है। हिन्दू धर्म का दायरा बहुत बड़ा और सबका भला चाहनेवाला रहा है। अफ़सोस है तो इस बात का कि हम लोगों में एक के बाद एक कमजोरियां आती गईं और एक उदार धर्म की अनमोल दौलत हम संभाल नहीं सके।

आज इस बात की ज़रूरत है कि दुनिया के विकसित धर्मों में हमारे लिए जो आवश्यक बातें कही गयी हैं उन्हें हम समझें और अपने जीवन में उन पर चलने की कोशिश करें।

नई पीढ़ी को सही समझ और शिक्षा देने के लिए ऐसे विचार उनके सामने रखना ज़रूरी है जिससे वे आदर्शों की तरफ प्रेरित हों और ज़िन्दगी का सही रास्ता उन्हें मिल सके।

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा ने इसी उद्देश्य से दुनिया के मुख्य धर्मों में जो शिक्षाप्रद कहानियां हैं, बडे-बडे संत-पैग़म्बरों की ज़िन्दगी में जो सच्ची घटनाएं हुई हैं, उन्हें लेकर एक सौ सचित्र पुस्तकें छापने की योजना बनाई है।

कहानियां इस तरह रखी गयी हैं कि बच्चों को वे उपदेश नहीं, जीवन से जुडी हुई मालूम हों और आसानी से समझ में आ जायें। मुझे उम्मीद है कि बच्चों के माता-पिता भी इन कहानियों को दिलचस्पी से पढ़ेंगे और अपने जीवन को समृद्ध करेंगे।

मुझे उम्मीद है कि इस कोशिश को पसन्द किया जायेगा, इस पर अमल किया जायेगा और इसका प्रचार किया जायेगा।

मोरारजी देसाई

अध्यक्ष,
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा

हक की रोटी

राजम नटराजन

हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
बम्बई

संपादक :

मूलशंकर भट्ट

चित्रकार :

सतीश पराशर

प्रकाशक :

वाडीलाल डगली
मानद मंत्री
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
महात्मा गांधी मेमोरियल बिल्डिंग
बम्बई–४०० ००२

मुद्रक :

अकील दीवानजी
ऑनलुकर प्रेस
१६, सासुन डाक
कोलाबा, बम्बई–४०० ००५

मूल्य :

दो रुपये

हक की रोटी

राजा कल्याणवर्धन बहुत ही उदार और प्रजा को प्यार करनेवाला था। शांतिपुर की राजगद्दी पर बैठे अभी उसे तीन मास ही बीते थे कि प्रजा की सुख-शांति और कल्याण के लिए उसने अनेक सदाव्रत खुलवा दिए। यहां प्यासों को पानी मिलता था। वैद्यशालाएं खुलवा दीं, जहां बीमारों का मुफ्त इलाज होता था।

एक रात राजा के मन में आया कि राज्य में घूमकर देखना चाहिए कि क्या प्रजा सचमुच सुखी है? लोगों के दुख दूर हुए हैं? क्या राज्य के कल्याण-कार्यों ने लोगों का कल्याण किया है?

राजा वेश बदलकर महल से निकला। उसने एक घर में रोशनी देखी, आवाजें सुनीं तो छिपकर खिड़की के नीचे जा खड़ा हुआ। अंदर पिता अपने बेटे को डांट रहा था, "परीक्षा में तुम्हें इतने खराब अंक क्यों मिले हैं? तुम्हारे शिक्षक की भी शिकायत आयी थी कि तुम पिछले दिनों से उदंड होते जा रहे हो। यही हाल रहा तो कल को जिंदगी में क्या करोगे? जवाब दो!"

एक चौदह-पंद्रह वर्ष के किशोर की आवाज आयी, "मेरी क्या गलती है?"

पिता ने कहा, "गलती? समझते नहीं हो तुम कि कल को तुम पर सारे घर की जिम्मेदारी पड़ेगी, तुम्हारा अपना घर-परिवार होगा। पढ़ोगे-लिखोगे नहीं तो इस नगर में तुम्हें कोई काम नहीं मिलेगा। और तुम कोई मजदूर-किसान के घर के तो हो नहीं कि शरीर की मेहनत का कोई काम कर सको। परिवार को खिलाओगे कहां से, कोई बीमार हुआ तो इलाज कहां से कराओगे?"

लड़के की उदंड आवाज अंधेरे में राजा के कानों से टकरायी, " राजा के सदाव्रत में खाऊंगा, राजा की वैद्यशाला में इलाज कराऊंगा ।"

राजा का मन बेचैन हो उठा । वह झट वहां से निकल पड़ा । तेजी से चलते उसके कदम उसे मजदूरों की बस्ती में ले आये । राज्य के लिए औजार, हथियार बनानेवाले लोहारों की यह बस्ती थी । एक छोटे से घर में अभी रोशनी जल रही थी । राजा ने दो व्यक्तियों के बोलने की आवाजें सुनीं । पत्नी कह रही थी, " जल्दी सो जाओ । सुबह उठकर लोहा भी तो तपाना है ।"

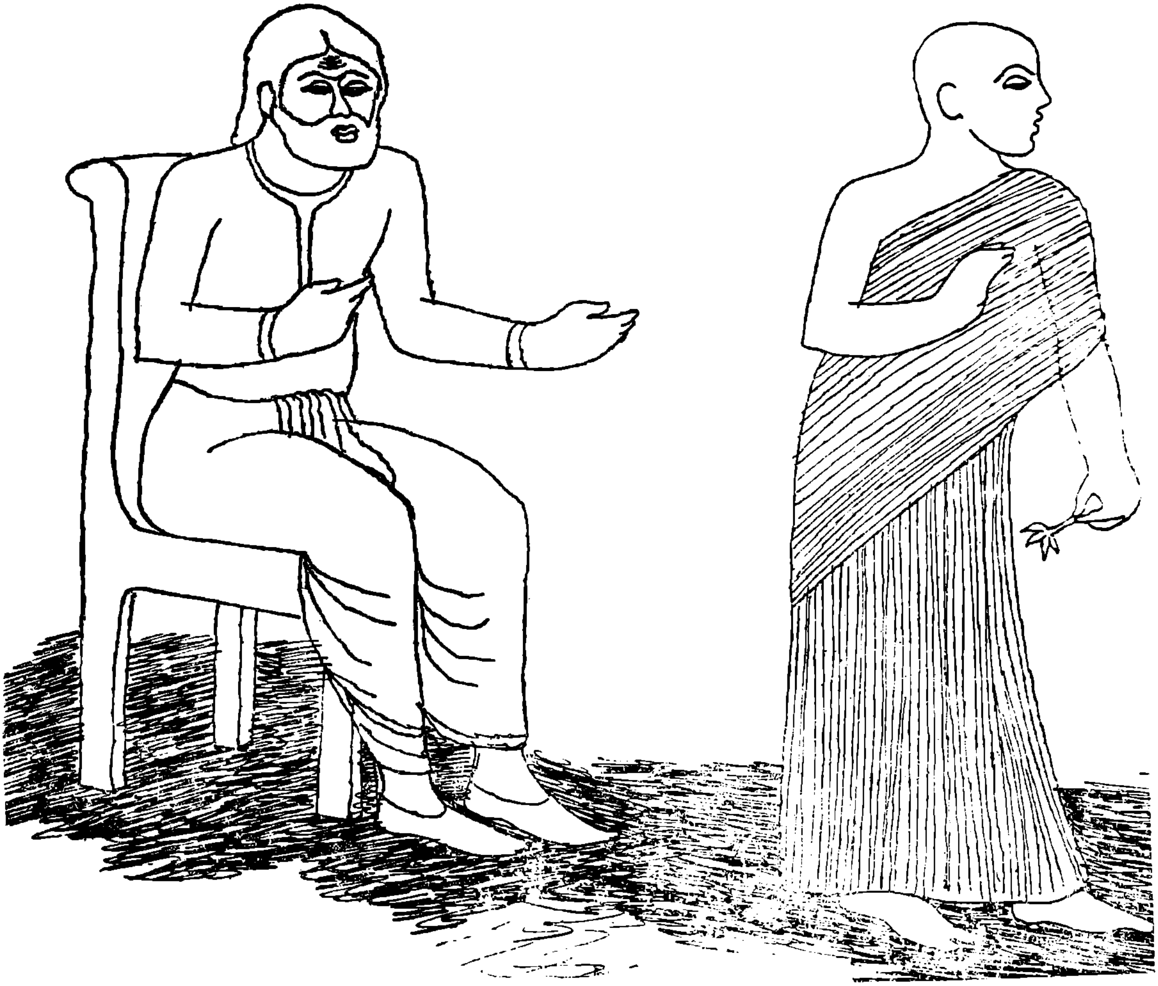
पति ने कहा, " क्या करूंगा सुबह उठकर ! कोई आता ही नहीं आजकल हथियार खरीदने । हां, कोई शौक से कसरत–वसरत करनेवाला या हथियार चलाना सीखनेवाला आ जाये तो आ जाये । उसके लिए तो बनी बनायी चीजें हैं ही । दे दूंगा उठाकर ।"

पत्नी बोली, " फिर ऐसे कैसे चलेगा ?"

पति बोला, " पगली, डर किस बात का है ? औजार न बिकते हों, न बिकें । हथियार कोई खरीदता न हो, न खरीदे । आदमी आखिर मेहनत करता है किसलिए ? अपना और बीवी-बच्चों का पेट भरने के लिए ही न ! भगवान भला करे राजा का कि उसने सदाव्रत खुलावा दिए हैं कि जो चाहे मुफ्त खा ले जाकर । वैद्यशालाएं खुलवा दी हैं कि जो चाहे मुफ्त इलाज करवा ले जाकर । अब किसी को हाथ-पैर हिलाने की जरूरत ही क्या है ? भला हो राजा का !"

राजा कल्याणवर्धन इस आशीर्वाद को झेल नहीं सका । यह आशीर्वाद है या अभिशाप ? वह महल की ओर लौट पड़ा । रास्ते में नगर के प्रसिद्ध व्यापारी श्रेष्ठि रूपचंद्र का महल दिखा । महल के एक कमरे से अभी रोशनी आ रही थी । आशंका और उत्सुकता से राजा उस कमरे से बाहर झाड़ी में छिप गया ।

श्रेष्ठि की आवाज आ रही थी, " बेटा शीलभद्र, अपना फैसला बदल डालो । तुम जानते हो, आजकल हमारी क्या हालत है ? तुम्हारा बड़ा भाई मणिभद्र तो अपना सारा समय भोग–विलास, नाच-तमाशे में बिता रहा है । एक तुम्हीं हो जो योग्य हो, कुशल हो, शीलवान हो और तुम्हीं कह रहे हो कि तुम संन्यासी बनने जा रहे हो ? बेटा, संन्यास लेना महान काम है, लेकिन



अपने सारे कर्तव्यों को पूरा करने के बाद।"

शीलभद्र की गंभीर आवाज उस अंधेरे में गूंज गयी, "कर्तव्य ? क्या कर्तव्य है ? किसके प्रति कर्तव्य ? मेरे लिए इस घर में करने के लिए क्या है ? धन-संपत्ति तो इतनी है कि तीन पीढ़ियां बैठकर खा सकें, और मान भी लें कि किसी भयानक घटना से हमारा सारा व्यापार चौपट हो जाये, तो भी डर किस बात का ? पेट भरने के लिए राजा कल्याणवर्धन के सदाव्रत तो हैं ही। दवाओं के लिए राजकीय वैद्यशालाएं हैं ही। पिताजी, अब किसी को कुछ करने

की जरूरत ही कहां है? कल का डर नहीं है, इसी बात ने तो भैया मणिभद्र को नाच-तमाशे की ओर मोड़ा है, और इसी बात ने मुझे संन्यास की ओर जाने के लिए मजबूर कर दिया है।"

राजा कल्याणवर्धन अब और नहीं सुन सका। रात भर उसे नींद नहीं आयी। उसने तो आम का पेड़ लगाया था, उसमें ये बबूल के कांटे कहां से उग आये? उसने तो प्रजा के कल्याण के लिए यह सब किया था। उसमें से यह भयानक विनाश कैसे पैदा हो गया? सुख-चैन नहीं, उद्दंडता; विश्राम नहीं, आलस्य; शांति नहीं, विलास और वैराग्य, यह कैसे हो गया?

सुबह होते ही राजा अपने गुरूदेव की कुटिया में जा पहुंचा। मन की अशांति का सारा कारण कह सुनाया। गुरूदेव कुछ देर मौन रहे, फिर बोले, "सवाल का उत्तर तो तुम्हें मिल ही जायेगा। जरा मेरे साथ चलो, जंगल से कुछ जड़ी-बूटियां चुननी हैं। चलते-चलते बातें होती रहेंगी।"

दोनों चल पड़े।

रास्ते में एक बुढ़िया सिर पर लकड़ियों का गट्ठर लिए चली आ रही थी। एक जगह टकराकर वह लड़खड़ा गयी तो गुरूदेव ने उसे संभाला। राजा ने लकड़ियों के गट्ठर को सहेजा और कहा, "मां, कहां है घर तुम्हारा? पहुंचा देता हूं वहां तक।"

चलते-चलते राजा ने पूछा, "इस उम्र में तुम यह काम क्यों कर रही हो मां?"

बुढ़िया ने कहा, "मेरे पति की तबियत खराब है। वैद्यजी से इलाज चल रहा है। उसके लिए भी पैसा चाहिए, और अपने खाने-पीने के लिए भी। सो थोड़ी सी लकड़ियां तोड़कर मैं ही बेंचने भी चली जाऊंगी।"

राजा चकित हुआ, "तुमने राजा के सदाव्रत से खाना क्यों नहीं ले लिया? वैद्यशाला से दवाएं क्यों नहीं मंगा लीं?"

बुढ़िया की झुकी हुई कमर तन गयी। उन धुंधली आंखों में तेज झलक उठा, "हम अपाहिज नहीं हैं, भिखारी नहीं हैं। पिछली सात पीढ़ियों से हम राजा की सेवा में रहकर, इस नगरी की रक्षा करते आ रहे हैं। मेरे दो बेटों की कुर्बानी पिछली लड़ाई में हुई है। राज्य ने मासिक मदद देनी चाही, हमने लेने से इंकार कर दिया। मेरे बेटों ने जो किया,



" मां, कहां है तुम्हारा घर ? पहुंचा देता हूं वहां तक !"

वह उनकी मेहनत थी, उनका कर्तव्य था। उसकी कीमत लेना उनका अपमान होता। हम अपनी मेहनत की, अपने हक की रोटी खायेंगे, दूसरे के मेहनत की, उनके हक की नहीं। दान की, भीख की रोटी हम क्यों खायें ?"

राजा का सिर आदर से झुक गया, मन गर्व से फूल उठा। लकड़ियां पहुंचाकर वह लौटने लगा तो बुढ़िया ने कहा, "घर के अंदर चलो। घर में तुम्हारा सत्कार करने लायक अधिक कुछ तो नहीं है। थोड़े से फल-फूल और थोड़ा सा दूध है। आप दोनों घर के अंदर चलें।"

राजा को संकोच हुआ। उसने गुरूदेव की ओर देखा कि इन गरीबों को इस हालत में और दुखी कैसे करें। उनके घर में खाने-पीने को होगा ही कितना और उसमें भी हिस्सा बंटायें तो बचेगा कितना ?

बुढ़िया ने बात समझ ली। बोली, "इतनी दूरतक लकड़ियां उठाकर आप ले आये हैं। मेरे काम में आपने हिस्सा बंटाया है। अब उतनी रोटी मेरे हक की नहीं, आपके हक की है।"

राजा कल्याणवर्धन समझ गया। उसे अपने सवाल का जवाब मिल गया। राजा को प्रजा के कल्याण के लिए, प्रजा के विकास के लिए काम करने चाहिए, लेकिन उनको आलसी, मुंहताज और मुफ्तखोर बनाने के लिए हर्गिज कुछ नहीं करना चाहिए। राज्य में सदाव्रत हों पर असहायों के लिए; राज्य में वैद्यशालाएं हों पर लाचारों के लिए।

मेहनत आदमी की मजबूरी नहीं, उसकी शक्ति है। जो मुफ्त की रोटी खाता है, वह उद्दंड हो जाता है, आलसी हो जाता है, विलासी हो जाता है, उदासीन हो जाता है। जो हक की रोटी खाता है, वह नम्र होता है, मेहनती होता है, अपनी जिम्मेदारी निभानेवाला होता है। ●

सच्चे फकीर की तलाश

खामोश, सुनसान काली रात। महल के एक कमरे में जलती एक अकेली शमा ! रात खामोश है, पर शांत नहीं है। शमा जल रही है, पर रोशनी नहीं दे रही है।

बादशाह अकेले हैं लेकिन उन्हें लग रहा है, जैसे वे अकेले नहीं हैं। मानो हर ओर से अनजान, काली परछाइयां, हौले-हौले चली आ रही हैं और वे कुछ भी नहीं कर सकते।

वे, एक बादशाह, जिनकी आंख के एक इशारे पर राह का भिखारी बादशाह हो सकता है, ताज धूल में लोट सकते हैं, जिनके खजाने में दुनिया की बेशुमार दौलत है, जिनके बाजुओं में असीम ताकत है और जिनके पास उस ताकत का साथ देनेवाली विशाल फौज है, वे बादशाह आज बदहवास, परेशान, लाचार हैं। नहीं, किसी दुश्मन की फौज ने उनके मुल्क पर धावा नहीं बोल दिया, न उनके मुल्क में कोई बाढ़ या अकाल ही पड़ा है। फिर भी बादशाह का आलीशान महल आज अंधेरे में डूबा है, और बादशाह खुद दोनों हथेलियों में सिर थामे बैठे हैं, लाचार। उनकी आंखों का नूर, उनका इकलौता बेटा सख्त बीमार है। कोई दवाई, कोई वैद्य—हकीम कारगर नहीं हो रहे हैं। क्या करे बादशाह, कुछ सूझ नहीं रहा है।

और तभी हर वक्त की तरह, मुसी-

बत की घड़ी में बादशाह को याद आयी अपने पिता के जमाने के बूढ़े वजीर मियां सैफुद्दीन की। बहुत सालों से उन्होंने राजकाज से संन्यास ले लिया था क्योंकि वे चाहते थे कि जिंदगी के बचे दिन खुदा की याद में और खुदा के बंदों की सेवा में गुजारें।

बादशाह ने नौकर के हाथ संदेश भेजा, "माफ करें। बेवक्त जरूर है, पर हो सके तो आ जायें।"

बूढ़े वजीर की अनुभवी, करुणाभरी आंखों ने देखा और समझा कि हां, आज एक बादशाह नहीं, एक परेशान बाप बुला रहा है। वे चल पड़े और बादशाह के पास पहुंचे।

"हुजूर।"

"मियां जी, अब क्या होगा? मैं कंगाल हो जाऊंगा, बरबाद हो जाऊंगा। मेरी आंखों का सितारा आज डूबने जा रहा है।"

"खुदा न करे ऐसा हो। ऐसा कुछ भी नहीं होगा, भरोसा रखें।"

"कैसे कह रहे हैं आप यह! सारे वैद्य-हकीम हार गये, सारी दवाएं बेअसर साबित हो गयीं।"

"जहां दवा असर नहीं करती, वहां दुआ असर कर सकती है। बादशाहेआलम, अपने बच्चे के दर्द से आप परेशान हैं। खुदा हम सबका पिता है। हमारा दर्द उस पर भी तो असर करेगा ही। बड़ा रहमदिल है वो, कभी सजा दे भी देता है अपने बच्चों को तो इसलिए कि वे नेकी के रास्ते पर चलें, उससे गुमराह न हो जायें। खुदा जरूर करम करेगा। आप उसी से दुआ मांगें, उसी की प्रार्थना करें।"

"मेरी समझ में तो कुछ नहीं आ रहा है। अब, जब कि सब खत्म हो रहा है, सब हार मान चुके हैं तो फिर खुदा की प्रार्थना से क्या मिल जायेगा। खुदा खुद तो यहां नहीं आ जायेंगे," परेशान बादशाह बोला।

"खुदा खुद नहीं आता, अपने बंदों की शकल में आकर अपनी दया-करम बरसा जाता है। हुजूर, देश के कोने-कोने में, दूर-दूर के जंगली-पहाड़ी प्रदेशों में डोंडी पिटवा दी गयी है कि जहां कहीं भी कोई कारगर हकीम-वैद्य, साधु-सन्यासी मिल जाये, जो राजकुमार की इस बीमारी को दूर कर सकता हो, तो उसे तुरंत यहां लाया जाये। मुझे पूरी उम्मीद है कि



"जहां दवा असर नहीं करती, वहां दुआ असर कर सकती है।"

सूरज उगते-उगते, यह अंधेरा दूर हो जायेगा। हिम्मत रखें, रात केवल चंद घड़ियों की रह गयी है। खुदा से दुआ करें।"

"आप कह रहे हैं तो मान रहा हूं मैं। खैर, दवा न सही, दुआ ही सही।"

और बादशाह घुटनों के बल बैठ गया। उसका सिर झुक गया, आंखें बंद कर लीं उसने और कमरे में उसकी प्रार्थना के स्वर गूंज उठे।

"हुजूर, हुजूरेआला," एक नौकर दौड़ता हुआ कमरे में आया।

बूढ़े वजीर ने उसे शांत रहने का इशारा किया और उसे एक कोने में ले गये, "क्या है ?"

"हुजूर, शाहजादेआलम ने आंखें खोल दी हैं। खुदा के करम से करिश्मा हो गया है हुजूर, करिश्मा !..."

"बात क्या हुई ?"

"एक कोई साधु आया था। उसने पता नहीं क्या जड़ी-बूटी सुंघायी दो-तीन बार, और बस, राजकुमार ने आंखें खोल दीं। और अब वे..."

बादशाह ने सिर झुकाया, आंखें बंद कीं, "या खुदा, मेहरबानी तेरी,' और उठ खड़े हुए। बूढ़े वजीर की आंखों में देखकर गंभीर आवाज में कहा, "आप सही कह रहे थे, रात चंद घड़ियों की रह गयी है। मैंने सब सुन लिया है। चलें, शाहजादे के पास चलें।"

बादशाह और बूढ़े वजीर शाहजादे के कमरे में पहुंचे। बहुत दिनों बाद राजकुमार को आज गहरी नींद आयी थी। बादशाह ने हौले से अपने बेटे के माथे पर हाथ रखा। उनकी आंखें डबडबा आयीं। वे कमरे से बाहर आ गये।

राजवैद्य ने बताया, "महाराज, भगवान की कृपा ही थी, आज इस पल वे महापुरुष यहां पधारे। हिमालय की कन्दाराओं में रहते हैं। जड़ी-बूटियों का, वैद्यक का अपूर्व गहन ज्ञान है उन्हें। पांच वर्ष में एक बार वे पहाड़ से उतरते हैं। एक वर्ष तक गांव-गांव घूमते रहते हैं। अपने चिकित्सा-ज्ञान से जनता-जनार्दन की सेवा करते हैं और फिर लौट जाते हैं अपने एकान्तवास में। उन्हीं के पास वह दुर्लभ बूटी थी, जिससे आज युवराज के प्राण बचे।"

बादशाह ने कहा, "साधु महाराज का भव्य आदर-सत्कार हो और उन्हें

बेशुमार धन-दौलत दी जाये। हम उनका दर्शन करना चाहते हैं। कहां हैं वे ?"

राजवैद्य ने सिर झुकाकर कहा, "महाराज, वे तो चले गये। मेरे हाथ में वह औषधि और उसके उपयोग की विधि बताकर वे चले गये।"

बादशाह ने चिढ़कर कहा, "आपने उन्हें रोका नहीं ? हम उन्हें मुंहमांगा पुरस्कार देते।"

राजवैद्य ने कहा, "महाराज, मैंने उन्हें रोका तो, लेकिन उन्होंने कहा, "मैंने अपने गुरूदेव से प्रतिज्ञा की है कि इस ज्ञान का उपयोग स्वार्थ या प्रतिदान के लोभ में नहीं करूंगा। क्षमा करें, सुबह होने में थोड़ा ही समय बाकी है। मुझे अगले गांव पहुंचना है," और वे चले गये।"

बादशाह ने बूढ़े वजीर की ओर देखकर पूछा, "अब ? मैंने तो मन-ही-मन सोच लिया था कि उस साधु को बीस हजार सोने की मुहरें दूंगा। लेकिन अब क्या करूं?"

वजीर ने कहा, "हुजूर, साधु और फकीर तो हमारे अपने शहर में भी हो सकते हैं। तलाश करायें और किसी सच्चे फकीर या सच्चे साधु को ये बीस हजार मुहरें दान कर दें।"

बादशाह के दूत तलाश में दौड़ पड़े। एक सप्ताह बीत गया, एक महीना बीत गया। और आखिर एक दिन वे सब लौट आये। पुरस्कार की बीस हजार मुहरें वे वापस लाये थे।

बादशाह चकित रह गये, "यह क्या, तुम्हें इतने बड़े मुल्क में कोई सच्चा फकीर नहीं मिला ? तुम ये बीस हजार सोने की मुहरें किसी को दे न सके ? क्या तुम्हें पहचान नहीं थी सच्चे फकीर को ? मियां सैफुद्दीन ने बताया तो था तुम्हें कि सच्चा फकीर क्या होता है, कैसा होता है, और फिर भी तुम ये बीस हजार सोने की मुहरें किसी को दे न सके ?"

दूतों के प्रमुख ने उत्तर दिया, "हुजूर, बीस हजार मुहरें लेने के लिए कई लोग आगे आये। लेकिन ...."

बादशाह ने पूछा, "कहां—कहां तलाश की थी तुम लोगों ने ?"

प्रमुख ने कहा, "हुजूर, साधुओं और फकीरों की जगह मंदिर, मस्जिद, देवस्थान और तीर्थस्थल होते हैं। हम पहले-पहल इन्हीं जगहों पर गये। वजीर साहब ने



"पांच वर्ष में एक बार वे पहाड़ से उतरते हैं।"

कहा था कि सच्चे फकीर की पहली निशानी यह है कि वह किसी से नफरत नहीं करता। लेकिन हुजूर, हमने देखा कि इन जगहों पर तो नफरत की, घृणा की भयानक बू थी। लोग खुदा का ध्यान करने की जगह कौन अधर्मी है, कौन विधर्मी है, कौन पापी है, कौन पाखंडी है इसी की चर्चा ज्यादा कर रहे थे। हर एक अपने धर्म को, अपने सम्प्रदाय को सर्वश्रेष्ठ बता रहा था और अपनी बात से मतभेद रखनेवाले के बारे में सब कहते थे कि वह पापी रौरव नरक में जायेगा, घोर कुंभीपाक में सड़ेगा, दोजख की आग में जलाया जायेगा। इसलिए हुजूर, वहां से तो हम लौट आये।"

बादशाह ने पूछा, "फिर ?"

प्रमुख ने कहा, "फिर हुजूर, हम मठों, आश्रमों, मजारों, तीर्थों में गये। वजीर साहब ने कहा था कि सच्चे फकीर की दूसरी निशानी यह है कि वह धन-दौलत से दूर रहता है। हुजूर, इन जगह पर तो बेशुमार धन-दौलत थी, और उनके मालिक, जो साधु-फकीर आदि ही हैं, वे पूरे शाही शान-शौकत के साथ रहते हैं। उनकी नजर चढ़ावों-भेंट और सौगातों पर रहती हैं। वे अपने भक्तों को उनके दौलत की तराजू पर तौलते हैं। हुजूर, हम वहां से भी लौट आये।"

बादशाह ने पूछा, "फिर तुम लोग कहां गये?"

प्रमुख ने कहा, "फिर तो हुजूर, हम पहाड़ों—कन्दराओं में रहनेवाले साधुओं-फकीरों के पास पहुंचे। वजीर साहब ने कहा था कि सच्चे की तीसरी निशानी यह है कि वह घमंड नहीं करता, नम्र होता है। यहां हम कई साधुओं-फकीरों से मिले। किसी का दावा था कि मैं बहुत पहुंचा हुआ हूं, पंद्रह साल से एक पैर पर खड़ा तपस्या कर रहा हूं। दूसरे ने कहा कि मैं ज्यादा पहुंचा हुआ साधु हूं। मैं हवा में उड़ सकता हूं। हर एक अपनी-अपनी तारीफ घमंड के साथ करता रहा। हम वहां से भी लौट आये।"

बादशाह ने कहा, "मंदिर, तीर्थस्थान, पहाड़-कंदरा कहीं कोई सच्चा साधु नहीं मिला ? वजीर साहब ने और कोई जगह नहीं बतायी तुम लोगों को? और कोई निशानी नहीं बतायी सच्चे साधु की ?"

प्रमुख ने कहा, "वजीर साहब ने कहा था कि देखो, सच्चे साधु की तलाश

में निकल रहे हो तो किसी के कपड़ों के रंग पर मत जाना। किसी के चेहरे के रंग-रूप, सजावट पर मत जाना कि कोई छापा-तिलक लगाये है, टोपी-माला पहनी है या दाढ़ी-चोटी रखी है। आते-जाते राह में, किसी वीरान मस्जिद को साफ-सुथरा कर, उसमें दिया जलता हुआ कोई इंसान मिल जाये; किसी अपाहिज बीमार की तीमारदारी करता हुआ कोई हकीम मिल जाये; दूर किसी मंदिर में, सुबह की बेला में बच्चों को पढ़ाता कोई अकेला साधु मिल जाये तो इन सबसे पूछ देखना कि क्या उन्हें बीस हजार सोने की मुहरें चाहिए? हुजूर, ऐसे लोग मिले तो सही, लेकिन ....''

बादशाह ने कहा, "लेकिन क्या?"

प्रमुख ने कहा, "हुजूर एक ने मेरे ही हाथ में घड़ा पकड़ाकर कहा कि जाओ, एक घड़ा पानी लाकर इस पेड़ को सींच दो। मैं समझूंगा, मुझे मुहरें मिल गयीं।

दूसरे ने कहा, "भैया, जिसकी गांठ भारी होती है उसे चोर-डाकुओं का डर लगा रहता है। वह भगवान का भजन क्या करेगा? देखो, मैं तो गांव के बच्चों को पढ़ा देता हूं। बच्चे अपने घर से कुछ ले आते हैं। हम सब खाते-पीते हैं। बस, धरती का बिछौना और आकाश का ओढ़ना। तुम्हारी यह मुसीबत लेकर मैं क्या अपनी रातों की नींद हराम करूं? ना भैया, अब फिर से यह नाच न नचाओ। सो हुजूर, हम इन जगहों से भी लौट आये।"

बादशाह ने कहा, "सही काम किया तुमने। वजीर ने ठीक कहा था कि सच्चा फकीर नफरत नहीं करता, धन-दौलत नहीं जोड़ता, घमंड नहीं करता। और जो यह सब करता है, वह चाहे किसी भी रंग के कपड़े पहन ले, जितनी भी माला जप ले, कितनी भी तीर्थयात्राएं कर ले, सच्चा साधु नहीं होता, सच्चा फकीर नहीं होता। पुरस्कार, इनाम, सौगात लेकर सच्चे फकीर की तलाश में निकलना व्यर्थ है। वह तो सुबह की धूप, बगीचे की हवा, अंधकार में सितारे की तरह होता है। उसे इनाम क्या दिया जा सकता है? जाओ, यह धन जरूरतमंदों-गरीबों के बीच बांट दो। कह दो, किसी सच्चे फकीर की खामोश प्रार्थना ने उन्हें यह दिया है।" ●

- सावित्री की कहानी
- संत मूलदास
- हज़रत राबिया बसरी
- मीरा
- सच्ची मित्रता
- दैत्य से देव
- गुरू गोविंद सिंह
- कौन जीता?
- नटखट कृष्ण कन्हैया
- सच की जीत

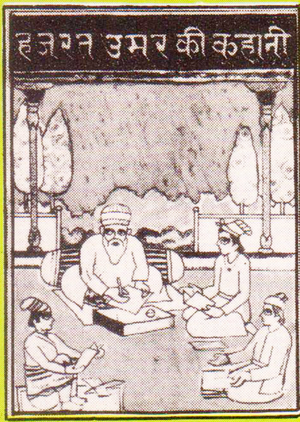
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा की स्थापना १९३८ में महात्मा गांधी की प्रेरणा तथा पेरीन बहन केप्टन के सद्प्रयत्नों से हुई थी। इस संस्था की कोशिश ऐसी राष्ट्रभाषा विकसित करने की रही है, जसे ग्राम जनता आसानी से समझ सके और जो नागरी व उर्दू दोनों लिपियों में लिखी जा सके। वह भाषा है हिन्दुस्तानी !

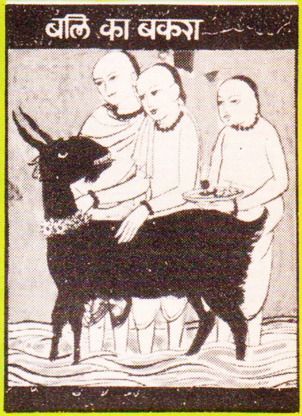
हिन्दुस्तानी प्रचार सभा दुनिया के सभी धर्मों से चुनी हुई, ज्ञान और आनन्द से भरी कहानियों की एक सौ किताबों का जो सेट बच्चों के लिए तैयार कर रही है, यह उसकी तीसरी किश्त है। इस सेट के हर किताब की कीमत दो रुपये होगी।

बच्चों की कहानियां







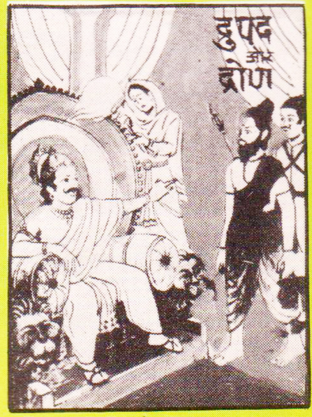


हिन्दुस्तानी प्रचार सभा
महात्मा गांधी मेमोरियल बिल्डिंग
बम्बई–४०० ००२

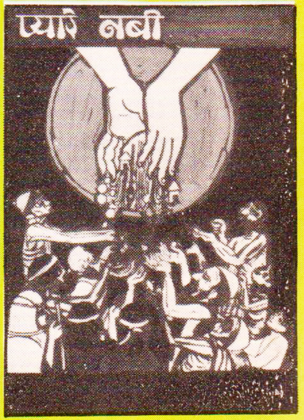












बच्चों की कहानियां